क्या पूजन

क्या पूजन क्या अर्चन रे!

महादेवी वर्मा

उस असीम का सुंदर मंदिर
मेरा लघुतम जीवन रे
मेरी श्वासें करती रहतीं
नित प्रिय का अभिनंदन रे

पद रज को धोने उमड़े
आते लोचन में जल कण रे
अक्षत पुलकित रोम मधुर
मेरी पीड़ा का चंदन रे

स्नेह भरा जलता है झिलमिल
मेरा यह दीपक मन रे
मेरे दृग के तारक में
नव उत्पल का उन्मीलन रे

धूप बने उड़ते जाते हैं
प्रतिपल मेरे स्पंदन रे
प्रिय प्रिय जपते अधर ताल
देता पलकों का नर्तन रे!

Abhigam Maurya

महान कवयित्री महादेवी वर्मा ने प्रस्तुत इस रुपक काव्य में अपने समग्र जीवन को अग्यात प्रियतम का मंदिर माना हैं। उनकी सांसे अपने प्रियतम का नित्य अभिनंदन करती हैं। प्रियतम का पग पखारने के लिए उनके लोचन-जल उमड पडते हैं। अपने प्रियतम की आराधना कवयित्री बडे अनोखे ढंग से करती हैं। यहां पर कवयित्री महादेवी वर्मा ने अध्यात्मवाद का समर्थन करते हुए, धार्मिक रुठियो के दकियानूसी और अवैग्यानिक, निरुपयोगी ख्यालो को तथा अंधश्रध्धा की परोक्ष रुप से जमकर खिचांई की हैं, जो अभिनंदनीय हैं। यहां पर उन लोगो को भी भली भांति यह संदेश मिल जाता हैं, जो अपनी सांप्रदायिक ताकत की आड में आस्तिक होने का दावा करते हैं। यहां कविता में दिए "प्रतिक" रुठिगत रीति-नीति का बंधन तोडते हुए जैसे विद्रोह किया हो एसे कहा है कि-"मंदिर के विकल्प में सुंदर जीवन ही उस असीम का मंदिर बन सकता हैं, उस असीम का नित अभिनंदन करने के लिए जप का विरोध करते हुए कवयित्री ने जीवन को और "मेरी श्वासे" ही अभिनंदन हैं, तथा उस असीम के पद-रज को धोने के लिए पवित्र पानी की अपेक्षा कवयित्री ने अपने लोचन से जल-कण ज्यादा उपयुक्त माना, असीम का के लिए अक्षत(बिना टूटे चावल) की बजाये मिलन की पीडा को ज्यादा उपयुक्त माना, तथा दीपक जलाने से अच्छा कवयित्री ने अपने मन को दीपक की भांति रखो तो दीपक जलाने की आवश्यकता नही हैं। और असीम का के लिए उत्पल (कमल के फ़ूल) की आवश्यकता नही है, बल्कि कवयित्री ने अपने नयन को ही सच्चे उत्पल कहे हैं। धूप की जगह स्पंदन और नर्तन की जगह पलको को रखकर सभी पुरानी मान्यताओ को ठुकरा देने वाली कवयित्री सचमुच अभिनंदनीय है।

मुझे यकिन हैं की यह सूफ़ि-शैली में लिखी कविता सबको पसंद आयेगी।

অনুবাদ

কেন পূজা কেন অর্চনা রে?

কবি- মহাদেবী বর্মা

ঐ অসীমের রূপদেবালয়
আমার ক্ষুদ্র জীবন রে,
শ্বাস যে আমার নিত্য করিছে
প্রিয়েরে অভিনন্দন রে।

পদধূলিকণা প্রক্ষালিবারে
ঠিকরে আসিছে জল রে
অক্ষত পুলকিতরোম মোর,
বেদনামধুর চন্দন রে।

ঝিলমিলিয়ে স্নেহ ভ'রে মোর
দীপক জ্বলিছে অন্তরে,
আমার নয়নতারায় নব
উন্মিলিছে পদ্ম রে।

ধূপ হয়ে ঐ উড়িতেছে দেখ
হৃদয়ের মোর স্পন্দন রে,
প্রিয় প্রিয় জপ দিতেছে অধর
পলক নাচিয়া তাল রে।

(অনুবাদক- পলাশ বিশ্বাস)

ভাবানুবাদ

কেন পূজা কেন অর্চনা রে!

কবি- মহাদেবী বর্মা

আমার ক্ষুদ্র জীবনটাই হল অজ্ঞাত প্রিয়তমের সুন্দর মন্দির।
আমার নিঃশ্বাস প্রতি মুহূর্তে তাঁকে অভিনন্দন জানাই।
প্রিয়তমের পদধূলি ধৌত করার জন্য প্রবলবেগে বর্ষিত হয় অশ্রুবারি / চোখের জল।
প্রিয়তমের জন্য আনন্দে জেগে ওঠে রোম। চন্দনের মতো শীতল হয়ে যায় আমার সমস্ত যন্ত্রণা।

প্রিয়তমকে বরণ করতে প্রতিমুহূর্তে আমার মন প্রদীপের মতো স্নেহের অনুরাগে পরিপূর্ণ হয়ে যায়।
একটি আশার সঞ্চার হয়ে আমার চোখের তারায় ফুটে ওঠে একটি নতুন পদ্মফুল।
প্রিয়কে দেখে প্রতি মুহূর্তে আমার স্পন্দন/ভাবনা সুগন্ধী ধূপের মতো সঞ্চারিত হয়।
আমার অধর সব সময় প্রিয়ের নাম জপতে থাকে। তার সাথে নর্তন করতে থাকে চোখের পাতা।

(অনুবাদক – মহর্ষি সরকার)